नीतीश : गुड़ खायेंगे, गुलगुलों से परहेज

अगले बिहार विधानसभा चुनाव में राजग गठबंधन का क्या होगा, यह अभी तक स्पष्ट नहीं हुआ है। भाजपा के कुछ नेताओं का कहना है कि वह आत्मसम्मान के प्रश्न पर समझौता नहीं करेगी। लेकिन भाजपा का प्रभावशाली नेतृत्व इस पक्ष में नहीं है। वह किसी भी हाल में जनता दल (यूनाइटेड) से गठबंधन बनाये रखने के पक्ष में है। राजग के संयोजक जद (यू) अध्यक्ष शरद यादव भी भाजपा से गठबंधन बनाये रखने के पक्ष में हैं, पर बिहार के मुख्यमंत्री नीतीश कुमार भाजपा को विशेष भाव देते प्रतीत नहीं होते। पटना में हाल ही में आयोजित भाजपा कार्यकारिणी की बैठक के बाद मोदी के पोस्टरों को ले कर जो हंगामा हुआ, उससे भाजपा की स्थिति कमजोर हुई। जहां तक बिहार के बाढ़ पीड़ितों को गुजरात सरकार द्वारा जो आर्थिक मदद दी गई थी, उसका ढिंढोरा पीटने से 'आहत' मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ने सहायता राशि का चेक वापस कर दिया। बाढ़ पीड़ितों के लिए कई राज्यों ने मदद भेजी थी, पर उन्होंने नरेन्द्र मोदी की तरह उसका ढिंढोरा नहीं पीटा। भाजपा ने इसका ढिंढोरा पीटा जिसकी कोई जरूरत नहीं थी। उसका सही जवाब नीतीश कुमार ने सहायता राशि का चेक वापस कर के दे दिया। उन्होंने यह भी स्पष्ट कर दिया कि बिहार में चुनाव प्रचार के लिये मोदी और वरुण गांधी को नहीं भेजा जाये जिनकी छवि कट्टरपंथी की है। अब भाजपा नेतृत्व का कहना है कि इस बात को वह तय करेगी कि किसे चुनाव प्रचार में भेजा जायेगा और किसे नहीं। साफ़ जाहिर है कि नीतीश कुमार यह नहीं चाहते कि भाजपा के उग्र हिंदूवाद के पैराकारों की वजह से उनका मुस्लिम वोट बैंक कहीं टूट न जाये। वे किसी भी तरह मुस्लिम वोट बैंक को बनाये रखना चाहते हैं, जबकि राष्ट्रीय जनता दल प्रमुख लालू प्रसाद और लोकजनशक्ति पार्टी के सुप्रीमों रामविलास पासवान की गिद्ध दृष्टि भी इस वोटबैंक पर लगी हुई है। ऐसे में नीतीश कुमार मुस्लिम वोटरों को अपने साथ बनाये रखने के लिए एड़ी-चोटी का जोर लगा रहे हैं और यही कारण है भाजपा के उग्र माने जाने वाले नेताओं से वह अपनी दूरी बनाये रखना चाहते हैं। लेकिन हकीकत यह है कि पूरी की पूरी भाजपा ही हिंदुत्ववाद के परचम को लहराती है। 'उग्र हिंदवाद' और 'उदार हिंदूवाद' महज लोगों को बरगलाने के लिये है। ऐसी बात नहीं है कि नीतीश कुमार इस बात से अनजान हों।

जब राजग सत्ता में थी तो 'उग्र हिंदूवाद' का झंडाबरदार आडवाणी थे और 'उदार हिंदूवाद' के वाजपेयी। पर यह भी लोगों को बरगलाने के लिए ही था। जब इस बात को भाजपा के ही एक नेता गोविंदाचार्य ने परोक्ष रूप में कहा तो उन्हें इसकी सजा के रूप में अब तक वनवास भोगना पड़ रहा है।

अब आडवाणी भाजपा का 'उदार' चेहरा बन गये हैं और मोदी 'उग्र'। पर मोदी ने अपने आप को गुजरात तक ही सीमित रखा है और गुजरात के बाहर उनकी छवि का कोई चमत्कारिक असर पड़ने वाला नहीं है। जहां तक वरुण गांधी का सवाल है, राजनीति में वे अभी बच्चे के समान हैं और उनकी कोई गंभीर पहचान नहीं है। नीतीश कुमार गुड़ तो खायेंगे, पर गुलगुले से परहेज करेंगे।

अगर भाजपा एक सांप्रदायिक पार्टी है तो उसके नेता चाहे वह कोई भी हो सांप्रदायिक विचारधारा से अलग कैसे हो सकते हैं? पर नीतीश कुमार मतदाताओं को बेवकूफ बनाने का खेल खेल रहे हैं। भूलना नहीं होगा कि राजग के शासन काल में ही वे रेलमंत्री बने थे। बिहार से अलग दूसरे राज्यों में मोदी के साथ वे एक मंच पर बैठ सकते हैं, पर बिहार में उनसे दूरी बनाये रखना चाहते हैं। यह एक नाटकबाजी के सिवा और कुछ भी नहीं है। नीतीश कुमार मुख्यमंत्री हैं तो उपमुख्यमंत्री भाजपा का है। उनके मंत्रिमंडल में भाजपा के अन्य नेता भी हैं। इसलिये नीतीश कुमार यह नहीं कह सकते कि वे गैरसांप्रदायिक हैं। अगर ऐसा होता तो न तो वे राजग मंत्रिमंडल में शामिल होते और न ही भाजपा के सहयोग से बिहार के मुख्यमंत्री बनते।

यह एक हकीकत है कि नीतीश कुमार हर हाल में चाहते हैं कि दूसरी बार भी बिहार की सत्ता उन्हें ही मिले। सिर्फ़ अपने दम पर ऐसा कर पाना उनके लिए मुश्किल होगा। इसलिए भाजपा को साथ में रखना उनकी मजबूरी है। उनके सामने और कोई दूसरा विकल्प नहीं है। कोई ऐसा राजनीतिक संगठन नज़र नहीं आता जिसके साथ वे गठजोड़ कर सकें।

बिहार में उनके विरोध में लालू-पासवान एकजुट हैं। कांग्रेस भी इनके साथ आ सकती है। यह समीकरण स्पष्ट है। फ़िर नीतीश को अपनी जीत सुनिश्चित करने के लिये भाजपा को साथ में लेना जरूरी होगा। जहां तक नीतीश कुमार की लोकलुभावन नीतियों का सवाल है, जनता उनकी हकीकत समझ रही है। नीतीश कुमार अपने आप को विकास पुरुष घोषित करवा रहे हैं। सुशासन का उन्होंने ऐसा राग अलापा है कि वे व्यंग्य में सुशासन बाबू तक कहे जाने लगे हैं। पर यह एक हकीकत है कि उनके नेतृत्व में बिहार का थोड़ा भी विकास नहीं हुआ है। यथास्थिति बनी हुई है। कुछ छोटे अपराधियों को पकड़ कर जेल भिजवा देने से ही विकास नहीं होता। विकास के लिए कृषि और उद्योग में विकास जरूरी है। पर इस मामले में कुछ भी विकास नहीं हुआ है। नीतीश के शासन के दौरान कोई भी नई इंडस्ट्री बिहार में नहीं लगी है। जहां तक अपराधियों पर नियंत्रण का सवाल है, बड़े माफ़िया छुट्टा घूम रहे हैं। पहले जहां उन पर लालू का वरद हस्त था, अब नीतीश का है। यह एक सच्चाई है कि बिना माफ़िया के सहयोग के नीतीश कुमार चुनाव तक नहीं जीत सकते। फ़िर ये बिहार के कैसे विकास की बातें कर रहे हैं?

बिहार में अभी जनता के पास कोई बेहतर विकल्प नहीं है। जिस तरह राष्ट्रीय स्तर पर राजनीतिक विकल्पहीनता बनी हुई है, उसी भांति बिहार में भी विकल्पहीनता की स्थिति है। जनता को इस बात से कोई फ़र्क नहीं पड़ता कि बिहार में मोदी और वरुण गांधी चुनाव प्रचार के लिए आते हैं या नहीं। हां, अगर नीतीश कुमार अपने आप को पूरी तरह गैरसांप्रदायिक घोषित करना चाहते हैं तो वे भाजपा से किनाराकशी करे लें। वरना भाजपा तो घोषित रूप से एक सांप्रदायिक विचारधारा वाली पार्टी है ही जिसके साथ उनका गठबंधन है।

– मनोज

अपराधी तस्लीमुद्दीन अब जद (यू) में

नीतीश कुमार ने इस बात का काफ़ी प्रचार किया है कि उन्होंने अपराधियों पर पूरी तरह लगाम लगा दी है। बिहार में अपराधीकरण को बढ़ावा देने में लालू प्रसाद की भूमिका सबसे बढ़ कर मानी गई है। पर बिहार में अपराधियों पर पूरी तरह लगाम लगाने का तमगा खुद ही लगा लेने वाले नीतीश कुमार ने कुख्यात अपराधी तस्लीमुद्दीन को अपनी पार्टी में शामिल कर लिया है जो अब तक राष्ट्रीय जनता दल में था और देवगौड़ा के प्रधानमंत्री रहने के दौरान लालू प्रसाद के दबाव पर उसे गृह राज्य मंत्री तक बना दिया गया था। जब मीडिया और दूसरी पार्टियों ने इस सवाल पर काफ़ी बवाल मचाया कि इतने बड़े घोषित अपराधी को जिस पर हत्या एवं बलात्कार के कई आरोप लगे हुए हैं, गृह राज्यमंत्री कैसे बना दिया गया, तो उसे मजबूरी में सरकार ने पद से हटाया। तस्लीमुद्दीन राजद के ही शहाबुद्दीन से जरा भी कम नहीं है। इसका इतना ज़्यादा आतंक है कि इसके इलाके में कोई भी इसके खिलाफ़ मुंह नहीं खोल सकता। प्रशासन से ले कर तमाम विरोधी दलों के नेता और कार्यकर्ता इससे खौफ़ खाते हैं और इसके खिलाफ़ मुंह खोलने से बचते हैं। जब इसने देख लिया कि लालू के पल्ले अब कुछ रह नहीं गया है और उनके साथ रह कर राजनीति की दुनिया में वह लूटपाट नहीं मचा सकता तो उसने जनता दल (यूनाइटेड) में आना मुनासिब समझा और स्वयं मुख्यमंत्री नीतीश कुमार ने उसका स्वागत किया यह कहते हुए कि पहले वह ग़लत जगह पर थे, पर अब सही जगह पर आ गये हैं। इससे समझा जा सकता है कि नीतीश कुमार अपराधी तत्वों के कितने बड़े विरोधी हैं।

डीम्ड विश्वविद्यालयों की बाढ़

दिल्ली-नोएडा हाइवे पर आजकल शारदा यूनिवर्सिटी के बड़े-बड़े विज्ञापनों की कतार दिखाई देती है। मानव संसाधन मंत्रालय ने 2008 में इसे 'डी नोवो' मानदंड के तहत यूनिवर्सिटी की मान्यता दी थी। लेकिन साथ ही, मंत्रालय ने इसे अपनी खामियों को दूर करने का निर्देश भी दिया था, जिसकी अनदेखी कर इसने अगस्त 2008 में नये सत्र की शुरुआत कर दी थी। बाद में इसने उत्तर प्रदेश विधायिका के 2009 के कानून-14 के तहत प्रांतीय निजी विश्वविद्यालय की मान्यता भी प्राप्त कर ली। लवली प्रोफेशनल विश्वविद्यालय का हाल तो इससे भी बुरा है। अपने विज्ञापनों में यह खुद को भारत का सबसे बड़ा विश्वविद्यालय घोषित करता है, जिसके कैंपस का क्षेत्रफल 600 एकड़ है और जो 75 फ़ीसदी अंक पाने वाले छात्रों को विदेश भ्रमण कराने और लैपटॉप देने का वादा करता है।

छत्तीसगढ़ के जिन 97 निजी विश्वविद्यालयों को फरवरी 2005 में प्रो. यशपाल द्वारा दायर मुकदमे पर फैसला सुनाते हुए सुप्रीम कोर्ट ने बंद करने का आदेश दिया था, उनमें लवली प्रोफेशनल विश्वविद्यालय भी शामिल था। सन् 2002 में छत्तीसगढ़ निजी विश्वविद्यालय अधिनियम के तहत कुकुरमुत्ते की तरह उग आये 112 विश्वविद्यालयों की जांच में पाया गया कि इनमें से 77 का अस्तित्व सिर्फ़ फ़ाइलों में है। कुछ विश्वविद्यालय एक कमरे के मकान में चलाये जा रहे थे, जबकि शेष के पास मूलभूत सुविधायें भी नहीं थीं। छत्तीसगढ़ से भगाये जाने के बाद लवली प्रोफेशनल विश्वविद्यालय पंजाब सरकार से कानूनी मान्यता पा कर फगवाड़ा में अपना धंधा चला रहा है।

उच्च शिक्षा के व्यवसायीकरण के लिए सरकार ने जो नयी नीतियां लागू की हैं, उन्हीं का नतीजा है कि ऐसे मुनाफ़ाखोर निजी संस्थानों को खुल कर खेलने की छूट मिल गई है। इनमें दी जा रही शिक्षा का स्तर कितना घटिया है, इसके लिए एक ही तथ्य काफ़ी है। परीक्षा प्रणाली पर बनाये गये राष्ट्रीय सुधार फोकस ग्रुप का मानना है कि कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर की पढ़ाई किये 20 में से 19 ग्रेजुएट और 7 में से 6 पोस्टग्रेजुएट नौकरी पर रखने लायक नहीं हैं। बिड़ला-अंबानी रिपोर्ट को सरकार ने कानूनी रूप नहीं दिया, लेकिन उसके सुझावों को अमल में लाने में हर पार्टी और गठबंधन की सरकार ने भरपूर उत्साह दिखाया। देश में हज़ारों विश्वविद्यालयों की जरूरत है, मगर सरकार ने उच्च शिक्षा पर खुद ध्यान देने के बजाय निजी पूंजीनिवेश की छूट दे कर इसे पतनशीलता के कीचड़ में धकेल दिया। 1995 में जब निजी विश्वविद्यालय कानून संसद में पारित नहीं हुआ तो सरकार ने उच्च शिक्षा के व्यवसायीकरण के लिए चोर दरवाजे निकाल लिए। इनमें एक उपाय यह था कि सरकारी विश्वविद्यालयों से मान्यता प्राप्त करके व्यावसायिक पाठ्यक्रम चलाने वाले हज़ारों निजी कॉलेज खोले गये। इस तरह शिक्षा में निजी पूंजी की बाढ़ आ गई। तत्कालीन मानव संसाधन विकास मंत्री मुरलीमनोहर जोशी की पहल पर वर्ष 2000 में डीम्ड विश्वविद्यालयों के लिए नये दिशा-निर्देश तैयार किया गया। इसमें पुराने मानदंडों को ढीला किया गया और ढेर सारे बिंदु अस्पष्ट एवं अपारिभाषित छोड़ दिये गये। यह भी पूंजीनिवेश के लिए एक चोर दरवाजा था जिसके बाद से देश भर में डीम्ड विश्वविद्यालयों का धंधा जोर पकड़ने लगा। 1970 से 1980 के बीच दस वर्षों में केवल तीन संस्थानों को डीम्ड विश्वविद्यालय का दर्जा दिया गया था, जबकि फरवरी 2009 तक इनकी संख्या बढ़ कर 127 हो गई। इसी का नतीजा है कि आज देश में कुल 357 विश्वविद्यालयों में से एक तिहाई से भी ज़्यादा डीम्ड विश्वविद्यालय हैं।

आज़ादी के तत्काल बाद गठित राधाकृष्णन आयोग ने डीम्ड विश्वविद्यालय की संकल्पना प्रस्तुत की जिसे 1956 में यू.जी.सी. ने अपनी नियमावली में शामिल कर लिया। यू.जी.सी. के इस नियम के अनुसार, 'ऐसी संस्था जो ऐतिहासिक कारणों से या किसी अन्य परिस्थितिवश विश्वविद्यालय नहीं है, लेकिन वह किसी विश्वविद्यालय के समान उच्च स्तर पर विशिष्ट शैक्षिक कार्य कर रही है' तो उसे 'डीम्ड टू बी यूनिवर्सिटी' (विश्वविद्यालय जैसा मानने का) दर्जा दिया जा सकता है।

इसके लिए संस्थानों को बहुत ऊंचे मानदंडों पर कसा जाता था। 1958 में केवल इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस, बैंगलोर और इंडियन एग्रीकल्चर रिसर्च इंस्टीट्यूट, नई दिल्ली ही इन कड़े मानदंडों पर खरे उतरे। 1967 तक टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ सोशल साइंस-बंबई, बिरला इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नालॉजी-पिलानी, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय-हरिद्वार, गुजरात विद्यापीठ-अहमदाबाद, इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ माइन्स-धनबाद आदि को 'डीम्ड टू बी यूनिवर्सिटी' का दर्जा मिला। इस तरह 1958 से 1995 तक देश भर में केवल 36 संस्थानों को ही 'डीम्ड टू बी यूनिवर्सिटी' यानी 'विश्वविद्यालय के समान' दर्जा प्राप्त हो सका। इनमें आई.आई.टी., आई.आई.एम., एम्स, जवाहर मेडिकल इंस्टीट्यूट (पांडिचेरी) जैसे उच्च स्तरीय संस्थान शामिल थे। संस्थानों को दिया गया यह दर्जा बहुत ही सम्मानजनक था और इनका स्तर भी काफी ऊंचा था। इस सूची में सुभारती, शारदा, पन्नाधाय, लवली प्रोफेशनल, एमिटी, सुमनदीप और शोभित जैसे सवा सौ से भी अधिक संस्थाओं को शामिल कर के सरकार ने डीम्ड विश्वविद्यालय की प्रतिष्ठा धूल में मिला दी।

शिक्षा माफ़ियाओं द्वारा चलाये जा रहे नयी पीढ़ी के डीम्ड विश्वविद्यालय मुनाफ़े की लूट के अड्डे हैं। छात्रों से मनमानी फ़ीस वसूलना, शिक्षकों को कम वेतन देना और उन्हें जब जी चाहे निकाल बाहर करना, प्रयोगशालाओं और अन्य सुविधाओं का नितांत अभाव, भवन का अभाव या अपर्याप्त होना, शोध कार्य से दूर-दूर तक कोई रिश्ता न रखना इन घटिया स्तर के डीम्ड विश्वविद्यालयों की असली पहचान है। सरकार ने डीम्ड विश्वविद्यालय का प्रमाण पत्र जारी कर के उन संस्थाओं की लूट-खसोट को आकर्षक आवरण प्रदान कर दिया। दूसरी तरफ, इनकी घिनौनी साजिशों ने लाखों-करोड़ों नौजवानों की जिंदगी में ज़हर घोल दिया है। शिक्षा पूरी करने के बाद ऐसे नौजवान दर-दर की ठोकर खाने को मजबूर हैं। इंटरव्यू में उन्हें तरह-तरह की जलालत झेलनी पड़ती है।

'डीम्ड टू बी यूनिवर्सिटी' के नये मानदंडों में से एक 'डी नोवो' श्रेणी के अंतर्गत उन नयी संस्थाओं को भी डीम्ड विश्वविद्यालय माना जा सकता है जो 'उभरते क्षेत्र' में 'उत्कृष्टता का दावा' करते हों। पहले, 1956 के नियम के अनुसार कम से कम 10 वर्ष पुराने संस्थान को ही यह दर्जा दिया जा सकता था। उस नियम के अनुसार ऐसे संस्थानों को अपने कॉलेज या ब्रांच खोलने या किसी कॉलेज को संबद्धता देने की अनुमति नहीं थी। 'डी नोवो' मानदंड ने व्यवहार में ऐसी हर बाध्यता को समाप्त कर दिया। 'उभरते क्षेत्र' में 'उत्कृष्टता का वादा' कर के अब कोई निजी संस्थान अपनी स्थापना के दिन से ही डीम्ड विश्वविद्यालय बन सकता है। अब ये डीम्ड हटा कर सीधे 'विश्वविद्यालय' लिखने लगे हैं। जहां तक ब्रांच खोलने का सवाल है, छत्तीसगढ़ के कागजी डीम्ड विश्वविद्यालयों ने अलग-अलग प्रदेशों में अनेक शाखायें खोल रखी थीं।

शेष अगले अंक में